(2013) 6 एससीआर 86

अब्दुल नसर आदम इस्माइल द्वारा अब्दुल बशीर आदम इस्माइल

बनाम

महाराष्ट्र राज्य व अन्य

(आपराधिक अपील संख्या 520/2013)

2, अप्रैल 2013

(टी.एस. ठाकुर और रंजना प्रकाश देसाई, जे.जे.)

निवारक निरोध- अंतर्गत धारा 3(1) कॉफ़ेपोसा के तहत निरोध-निरोध आदेश को दो आधारों पर हमला किया गया (1) बंदी के अभ्यावेदन पर स्वतंत्र विचार नहीं किया गया, और (2) अभ्यावेदन के निपटान में देरी और जेल प्राधिकरण द्वारा निरोध प्राधिकारी को अभ्यावेदन प्रेषित करने में देरी- निर्धारितः स्वतंत्र विचार की कमी की शिकायत बिना किसी आधार के है- कोई भी अस्पष्टीकृत देरी अनुच्छेद 22(5) के तहत प्रदान की गई संवैधानिक अनिवार्यता का उल्लंघन होगी- लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि हर दिन की देरी को समझाया जाना चाहिए- स्पष्टीकरण यह दर्शाते हुए कि कोई शिथिलता या उदासीनता नहीं थी उचित होना चाहिए- वर्तमान मामले में निरोध प्राधिकारी और प्रायोजक प्राधिकारी ने अभ्यावेदन की प्राप्ति और उसके अस्वीकृति की सूचना की तारीख के बीच के समय

अंतराल को उचित रूप से समझाया है- हालांकि जेल प्राधिकारी द्वारा निरोध प्राधिकारी को अभ्यावेदन प्रेषित करने में हुई देरी को स्पष्ट नहीं किया है- इसलिए, बंदी को निरंतर निरोध मंे रखना अवैध है- हालांकि, देरी ने निरोध आदेश को दूषित नहीं किया है- विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी गतिविधियों का आदान प्रदान और रोकथाम अधिनियम, 1974- धारा 3(1)- भारत का संविधान, 1950- अनुच्छेद 22(5)।

अभ्यास और प्रक्रिया- नई याचिका- उच्चतम न्यायालय के समक्ष मुद्दा उठाया- निर्धारितः निवारक निरोध के मामले में नई याचिका स्वीकार है।

भविष्य में अपीलकर्ता-अभियुक्त को माल की तस्करी करने से रोकने के उद्देश्य से उसे विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी गतिविधियों का आदान प्रदान और रोकथाम अधिनियम, 1974 की धारा 3(1) के अंतर्गत निरोध में लिया गया था। बंदी द्वारा दायर रिट याचिका विरूद्ध निरोध आदेश उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था।

इस न्यायालय की अपील में अपीलकर्ता-बंदी ने तर्क दिया कि उसकी नजरबंदी गलत थी क्योंकि निरोध प्राधिकारी द्वारा अभ्यावेदन पर स्वतंत्र विचार नहीं किया गया था और बंदी के अभ्यावेदन पर विचार करने में अत्यधिक देरी हुई थी जिससे संविधान के अनुच्छेद 22(5) के तहत उसके

अधिकारों का उल्लंघन हुआ है और जेल से निरोध प्राधिकरण को अभ्यावेदन भेजने में भी देरी हुई।

अपील का निपटारा करते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया।

1.1. यह दलील कि निरोध प्राधिकारी द्वारा अभ्यावेदन पर स्वतंत्र विचार नहीं किया गया था, बहस के समय पहली बार इस न्यायालय के समक्ष उठायी गई थी। सामान्यत ऐसी याचिका की अनुमति नहीं दी जाती है। लेकिन उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के तहत बंदी प्रत्यक्षीकरण को अपूर्ण दलीलों के आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता है, इस बिंदु को प्रचारित करने की अनुमति दी जा रही है। पैरा 5, 97-ए-सी

मोहिनुद्दीन उर्फ मोइन मास्टर बनाम जिला मजिस्ट्रेट, बीड और अन्य (1987) 4 एससीसी 58 1987 (3) एससीआर 668-पर निर्भर।

1.2. क्या किसी अभ्यावेदन पर निरोध प्राधिकारी द्वारा स्वतन्त्र रूप से विचार किया गया है या नहीं इसके लिए निरोध प्राधिकारी को शपथपत्र पर कहना होता है। यह तथ्य निरोध प्राधिकारी के अनन्य व्यक्तिगत ज्ञान में है। यदि यह मुद्दा रिट याचिका में उठाया गया होता, तो निरोध प्राधिकारी ने अपने शपथपत्र में इस पर विचार किया होता। ऐसी परिस्थिति में, यदि निरोध प्राधिकारी के शपथ पत्र में कोई स्पष्ट कथन नहीं है कि उसने स्वतंत्र रूप से अभ्यावेदन पर विचार किया था, इसके लिए उसे दोषी

नहीं ठहराया जा सकता। ऐसा कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि निरोध प्राधिकारी ने अभ्यावेदन पर स्वतंत्र रूप से विचार नहीं किया। शपथपत्र में उसने कहा है कि अभ्यावेदन को संबंधित सहायक, अण्डर सचिव और उप सचिव के माध्यम से संसाधित किया गया और फिर उसके सामने रखा गया। इस प्रक्रिया पर तब तक कोई आपत्ति नहीं की जा सकती जब तक कि अभ्यावेदन पर कार्यवाही करने में कोई ढिलाई न बरती जाये। वर्तमान मामले में, पूरी प्रक्रिया चार दिनों के भीतर पूरी की गई। इसलिए, यह निवेदन कि निरोध प्राधिकारी ने स्वतंत्र रूप से अभ्यावेदन पर विचार नहीं किया है और वह अधीनस्थ अधिकारियों द्वारा किए गए समर्थन से प्रभावित हो सकती है, बिना किसी आधार के है। पैरा 10, 99-ई-एच; 100-ए-बी

के.एम. अब्दुल्ला कुन्ही और बी.एल. अब्दुल खादर बनाम भारत संघ और अन्य (1991) 1 एससीसी 476: 1991 (1) एससीआर 102; कमलेशकुमार ईश्वरदास पटेल आदि बनाम भारत संघ एवं अन्य (1995) 4 एससीसी 51: 1995 (3) एससीआर 279; वेनमथी सेल्वम (श्रीमती) बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्य 1998 (5) एससीसी 510: 1998 (3) एससीआर 526; हर्षला संतोष पाटिल बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य (2006) 12 एससीसी 211; भारत संघ बनाम हरीश कुमार (2008) 1 एससीसी 195: 2007 (3) एससीआर 994; यूनियन ऑफ इंडिया बनाम

मनीष बहल उर्फ निशु (2001) 6 एससीसी 36: 2001 (3) एससीआर 810- संदर्भित।

2.1. संविधान का अनुच्छेद 22(5) सरकार पर बंदियों के अभ्यावेदन पर संभवता यथाशीघ्र विचार करने का कानूनी दायित्व डालता है। हालाँकि अभ्यावेदन के निस्तारण के लिए कोई समय सीमा निर्धारित नहीं है, लेकिन संवैधानिक अनिवार्यता यह है कि इसका निस्तारण यथाशीघ्र किया जाना चाहिए। कोई भी लापरवाह उदासीनता, ढिलाई या संवेदनहीन रवैया नहीं होना चाहिए। कोई भी अस्पष्ट देरी संवैधानिक अनिवार्यता का उल्लंघन होगी और यह निरोध में लिए गए व्यक्ति की निरंतर निरोध को अवैध बना देगी। हालाँकि, इसका मतलब यह नहीं है कि अभ्यावेदन के निपटारे में हर दिन हो रही देरी को बंदी को समझाना होगा। पेश किया गया स्पष्टीकरण उचित होना चाहिए जिससे यह पता चले कि कोई ढिलाई या उदासीनता नहीं थी। हालाँकि देरी स्वयं घातक नहीं है, लेकिन जो देरी अस्पष्ट रहती है वह अनुचित हो जाती है। अदालत निश्चित रूप से इस बात पर विचार कर सकती है कि देरी अनुमेय कारणों से हुई या अपरिहार्य कारणों से। यह कहना पर्याप्त नहीं है कि देरी बहुत कम थी। इससे अधिक विलंब को भी स्पष्ट किया जा सकता है। इसलिए परीक्षण अवधि या विलंब की सीमा नहीं है, बल्कि संबंधित प्राधिकारी द्वारा इसकी व्याख्या कैसे की जाती है। यदि अंतरविभागीय परामर्शी प्रक्रियाएं ऐसी हैं कि देरी अपरिहार्य हो जाती है, तो ऐसी प्रक्रियाएं संवैधानिक आदेश का उल्लंघन करेंगी। निरोध का आदेश देने

के लिए बाध्य किसी भी प्राधिकारी को अभ्यावेदन पर शीघ्र विचार करने के लिए गणना की गई प्रक्रिया अपनानी चाहिए। ऐसा अभ्यावेदन प्राप्त होते ही उस पर विचार किया जाना चाहिए और अंतिम निर्णय लेने और बंदी को सूचित किए जाने तक लगातार (जब तक कि इसके संबंध में कुछ सहायता की प्रतीक्षा करना आवश्यक न हो) निपटाया जाना चाहिए। पैरा 14, 104-बी-एफ

के.एम. अब्दुल्ला कुन्ही और बी.एल. अब्दुल खादर बनाम भारत संघ और अन्य (1991) 1 एससीसी 476: 1991 (1) एससीआर 102- अनुसरण किया गया।

2.2. निरोध प्राधिकरण और प्रायोजक प्राधिकरण ने 6/7/2012 के बीच के समय अंतराल को उचित रूप से समझाया है यानी वह तारीख जब निरोध प्राधिकरण द्वारा अभ्यावेदन प्राप्त किया गया था और निरोध में लिए गए अस्वीकृति के संचार की तारीख यानी 30/7/2012 को उनके द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण उचित एवं स्वीकार्य है। अभ्यावेदन प्राप्त होते ही उस पर विचार किया जाता था और उस पर तब तक लगातार विचार किया जाता था जब तक कि कोई अंतिम निर्णय न ले लिया जाए और बंदी को सूचित न कर दिया जाए। निस्संदेह, प्रायोजकों से पैरा-वार टिप्पणियाँ प्राप्त करने में समय लगा। लेकिन, प्रायोजक प्राधिकारी की राय मांगने को निरर्थक कार्य नहीं कहा जा सकता। इस प्रकार, अभ्यावेदन की प्राप्ति से

लेकर उस पर विचार करने और बंदी को अस्वीकृति की सूचना देने के बीच के समय अंतराल को उचित रूप से समझाया गया है। पैरा 15, 150-बी-डी

फ्रांसिस कोरली मुलिन बनाम डब्ल्यू.सी. खांबरा एआईआर 1980 एससी 849: 1980 (2) एससीआर 1095; कमरुन्निसा बनाम भारत संघ (1991) 1 एससीसी 128: 1990 (1) पूरक एससीआर 457- पर निर्भर।

2.3. निरोध प्राधिकारी के शपथपत्र में बताया गया कि प्रायोजक प्राधिकारी द्वारा निरोध आदेश पारित होने तक क्या कदम उठाए गए और प्रस्ताव कैसे प्रस्तुत किया गया। प्रायोजक प्राधिकरण ने प्रस्ताव प्रस्तुत किए जाने तक अपने द्वारा उठाए गए कदमों के बारे में बताते हुए शपथपत्र भी दायर किया है। उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उक्त स्पष्टीकरण संतोषजनक है। इसलिए, निरोध के आदेश को इस आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता कि निरोध आदेश जारी करने में देरी हुई थी। पैरा 10 और 11, 100-जी; 101-ए; 102-सी

राजेंद्रकुमार नटवरलाल शाह बनाम गुजरात राज्य (1988) 3 एससीसी 153: 1988 (1) पूरक एससीआर 287- पर निर्भर।

सईद जाकिर हुसैन मलिक बनाम महाराष्ट्र राज्य (2012) 8 एससीसी 233: 2012 (7) एससीआर 235- संदर्भित

2.4. जहां तक निरोध आदेश के निष्पादन में देरी का संबंध है, निरोध प्राधिकारी के शपथपत्र से यह प्रतीत होता है कि निरोध में लिया

गया व्यक्ति कर्नाटक राज्य के मैंगलोर का निवासी है। कॉफ़ेपोसा सेल के सीमा शुल्क उपायुक्त के शपथपत्र से प्रतीत होता है कि चूंकि बंदी कर्नाटक राज्य के मैंगलोर का निवासी था, इसलिए निरोध का आदेश, निरोध का आधार और संलग्न दस्तावेज कर्नाटक राज्य को भेज दिए गए थे और इसलिए निरोध का आदेश बंदी को केवल 10/5/2012 को ही भेजा जा सका। इस प्रकार वर्तमान मामले के अजीबोगरीब तथ्यों में, उच्च न्यायालय ने इस दलील को सही ढंग से खारिज कर दिया है कि निरोध आदेश के निष्पादन में देरी हुई थी। पैरा 11, 102-सी-एफ

2.5. हालाँकि, जेल प्राधिकारी द्वारा निरोध प्राधिकारी को अभ्यावेदन भेजने में हुई देरी को स्पष्ट नहीं किया गया है। यदि जेल अधीक्षक को 23/6/2012 को अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था, तो उन्हें इसे तुरंत निरोध प्राधिकारी को भेजना चाहिए था। निरोध प्राधिकारी को यह 6/7/2012 को प्राप्त हुआ है। 23/6/2012 और 6/7/2012 के बीच का समय अंतराल बिल्कुल भी स्पष्ट नहीं किया गया है। निरोध प्राधिकारी द्वारा केवल यह कहा गया था कि 23/6/2012 और 1/7/2012 सार्वजनिक अवकाश थे। जेल अधीक्षक की ओर से निष्क्रियता का कोई स्पष्टीकरण नहीं है। उन्होंने यह बताने के लिए कोई शपथपत्र दाखिल करने की परवाह नहीं की कि 23/6/2012 को उन्हें जो अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था, उसे निरोध प्राधिकारी को तुरंत क्यों नहीं भेजा गया। चूंकि जेल अधीक्षक ने देरी के बारे में कोई

शपथपत्र दायर नहीं किया है, इसलिए यह देरी बंदी की निरंतर निरोध को अवैध बनाती है। पैरा 16, 102-डी-एफ

असलम अहमद ज़हीर अहमद शेख बनाम भारत संघ और अन्य (1989)3 एससीसी 277: 1989 (2) एससीआर 415; पेबम निंगोल मिकोल देवी बनाम मणिपुर राज्य और अन्य (2010) 9 एससीसी 618: 2010 (12) एससीआर 429; विजय कुमार बनाम जे.एंड.के. राज्य (1982) 2 एससीसी 43 1982 (3) एससीआर 522- पर भरोसा किया गया।

2.6. यह स्पष्ट किया जाता है कि बंदी के अभ्यावेदन के निपटान में देरी ने केवल बंदी की निरंतर निरोध को रद्द कर दिया है, न कि निरोध के आदेश को। अतः निरुद्धि का आदेश दिनांक 16/4/2012 मान्य है। हालाँकि, राज्य सरकार द्वारा बंदी के अभ्यावेदन के निपटान में देरी के कारण, बंदी के निरंतर निरोध को अवैध बना दिया गया है। बंदी को नजरबंदी से रिहा करने का निर्देश दिया जाता है। पैरा 18, 107-ई-एफ

के.एम. अब्दुल्ला कुन्ही और बी.एल. अब्दुल खादर बनाम भारत संघ और अन्य (1991) 1 एससीसी 476: 1991 (1) एससीआर 102- का अनुसरण किया गया।

सैयद अब्दुल अला बनाम भारत संघ (2007) 15 एससीसी 208: 2007 (10) एससीआर 631; मीना जयेंद्र ठाकुर बनाम भारत संघ (1999) 8 एससीसी 177: 1999 (3) पूरक एससीआर 98; यूनियन ऑफ इंडिया

बनाम हरीश कुमार (2008) 1 एससीसी 195: 2007 (3) एससीआर 994 पर भरोसा किया गया।

बेबी डेवेसी चुली उर्फ बॉबी बनाम यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य 2012 (10) स्केल 176- अनुपयुक्त ठहराया गया।

हरीश पाहवा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य (1981) 2 एससीसी 710: 1981 (3) एससीआर 276- संदर्भित।

रतन सिंह आदि बनाम पंजाब राज्य और अन्य (1981) 4 एससीसी 481: 1982 (1) एससीआर 1010; बी अलामेलु बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्य (1995) 1 एससीसी 306; श्रीमती खातून बेगम आदि आदि बनाम भारत संघ एवं अन्य (1981) 2 एससीसी 480: 1981 (3) एससीआर 137; कुन्दनभाई दुलाभाई शेख आदि बनाम जिला मजिस्ट्रेट, अहमदाबाद और अन्य (1996) 3 एससीसी 194: 1996 (2) एससीआर 479; राजम्मल बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्य (1999) 1 एससीसी 417: 1998 (3) पूरक एससीआर 551; उम्मू सबीना बनाम केरल राज्य और अन्य (2011) 10 एससीसी 781: 2011 (13) एससीआर 185; श्रीमती इच्छु देवी चोरारिया बनाम भारत संघ और अन्य (1980) 4 एससीसी 531: 1981 (1) एससीआर 640; रेखा बनाम तमिलनाडु राज्य (2011) 5 एससीसी 244: 2011 (4) एससीआर 740-उद्धृत।

मामला कानून संदर्भ

1982 (1) एससीआर 1010 उद्धृत किया गया पैरा 4 (1995) 1 एससीसी 306 उद्धृत किया गया पैरा 4

1981 (3) एससीआर 137 उद्धृत किया गया पैरा 4

1996 (2) एससीआर 479 उद्धृत किया गया पैरा 4

1998 (3) पूरक एससीआर 551 उद्धृत किया गया पैरा 4

2011 (13) एससीआर 185 उद्धृत किया गया पैरा 4

1981 (1) एससीआर 640 उद्धृत किया गया पैरा 4

2011 (4) एससीआर 740 उद्धृत किया गया पैरा 4

1991 (1) एससीआर 102 संदर्भित किया पैरा 5

पालन किया पैरा 13 और 17

1998 (3) एससीआर 526 संदर्भित किया पैरा 5

(2006) 12 एससीसी 211 संदर्भित किया पैरा 5

1995 (3) एससीआर 279 संदर्भित किया पैरा 5

1987 (3) एससीआर 668 भरोसा किया पैरा 5

2007 (10) एससीआर 631 संदर्भित किया पैरा 5

2007 (3) एससीआर 994 संदर्भित किया पैरा 7

2001 (3) एससीआर 810 संदर्भित किया पैरा 7

1981 (3) एससीआर 276 संदर्भित किया पैरा 11

2012 (10) स्केल 176 अप्रयोज्य रखा गया पैरा 11

2012 (7) एससीआर 235 संदर्भित किया पैरा 11

1988 (1) पूरक एससीआर 287 भरोसा किया पैरा 11

1980 (2) एससीआर 1095 भरोसा किया पैरा 1

1991 (1) एससीआर 102 पालन किया पैरा 13

1989 (2) एससीआर 415 भरोसा किया पैरा 16

2010 (12) एससीआर 429 भरोसा किया पैरा 16

1981 (3) एससीआर 276 भरोसा किया पैरा 17

2012 (7) एससीआर 235 भरोसा किया पैरा 17

1990 (1) पूरक एससीआर 457 भरोसा किया पैरा 15

1982 (3) एससीआर 522 भरोसा किया पैरा 16

2007 (10) एससीआर 631 भरोसा किया पैरा 17

1999 (3) पूरक एससीआर 98 भरोसा किया पैरा 17

आपराधिक अपीलीय न्यायनिर्णय- आपराधिक अपील संख्या 520/2013

उच्च न्यायालय, बॉम्बे क्षेत्राधिकार के रिट याचिका संख्या 2613/2012 में निर्णय और आदेश दिनांक 23.01.2013 से।

के.के. मणि, अभिषेक कृष्णन अपीलकर्ता की ओर से।

अरुण आर. पेडनेकर, संजय वी. खरदे, आशा गोपालन नायर रेस्पोडेंट की ओर से।

न्यायालय का निर्णय (श्रीमती) रंजना प्रकाश देसाई, जे. सुनाया गया

1. अवसर दिया गया।

2. इस अपील में, विशेष अनुमति द्वारा, अपीलकर्ता ने बॉम्बे हाई कोर्ट की डिवीजन बेंच द्वारा पारित दिनांक 23/01/2013 के निर्णय और आदेश को चुनौती दी है, जिसमें उसने निरोध के आदेश दिनांक 16/4/2012 को चुनौती देने वाली रिट याचिका को खारिज कर दिया था। विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी गतिविधियों का आदान प्रदान और रोकथाम अधिनियम, 1974 की धारा 3 (1) के प्रावधानों के तहत निरोध प्राधिकारी अर्थात प्रधान सचिव (अपील और सुरक्षा), महाराष्ट्र सरकार, गृह विभाग द्वारा जारी किया गया (संक्षेप में, ''उक्त अधिनियम")। निरोध के आदेश में भविष्य में उसे माल की तस्करी से रोकने के उद्देश्य से उसे निरोध में लेने का निर्देश दिया गया।

3. निरोध के आधार से, यह निरोध प्राधिकारी का मामला प्रतीत होता है कि 12/8/2011 को, अपीलकर्ता अब्दुल नासर एडम इस्माइल (सुविधा के लिए ''निरोध में रखा गया'') एयर इंडिया की उड़ान संख्या एआई-984 द्वारा दुबई से आया था। उसके पास एक ट्रॉली हैंड बैग था। ग्रीन चैनल के माध्यम से मंजूरी मिलने के बाद, उसे ड्यूटी पर सहायक सीमा शुल्क आयुक्त ने रोक दिया। जब उसकी व्यक्तिगत तलाशी ली गई, तो यह देखा गया कि उसने दो पैकेट अपने कमर के पास अपने अंडरगारमेंट्स में और दो पैकेट पिंडलियों पर पहने जाने वाले घुटने के कैप के नीचे छुपाए थे। उसके पैंट को हटाने पर, सेलो टेप से लिपटे चार प्लास्टिक के पैकेट, जो उसके साइक्लिंग शॉर्ट्स और उसकी पिंडलियों पर उसके द्वारा पहने गए घुटने की कैप के अंदर रखे गए थे, बरामद हुए। इन चार पैकेटों की विस्तृत जांच से 22 कैरेट की 3086 ग्राम और 18 कैरैट की 1004 ग्राम की सोने की चेन जब्त की गई थी। जब्त किए गए कुल सोने की कीमत 95,35,932/- रुपये थी। सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 108 के तहत बंदी के बयान दर्ज किए गए। प्रायोजक प्राधिकारी द्वारा भेजे गए प्रस्ताव और संलग्न दस्तावेजों के अवलोकन पर, निरोध प्राधिकारी ने उपरोक्त निरोध आदेश पारित किया।

4. हमने बंदी की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री के.के. मणि, को कुछ हद तक सुना है। उन्होंने दो मामलों में निरोध आदेश की आलोचना की। सबसे पहले, उन्होंने तर्क दिया कि बंदी ने अपने वकील के

माध्यम से अपना अभ्यावेदन दिनांक 23/6/2012 को राज्य सरकार को अग्रेषित करने के लिए जेल प्राधिकरण को प्रस्तुत किया था। उक्त अभ्यावेदन को राज्य सरकार द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था और अस्वीकृति को महाराष्ट्र सरकार के अण्डर सचिव द्वारा दिनांक 24/7/2012 के पत्र के माध्यम से बंदी को सूचित किया गया था। वकील ने कहा कि इस प्रकार बंदी के अभ्यावेदन पर विचार करने में अत्यधिक देरी हुई है जिससे भारत के संविधान के अनुच्छेद 22(5) के तहत उसके अधिकार का उल्लंघन हुआ है। वकील ने कहा कि हर स्तर पर देरी हो रही है, जो राज्य सरकार के लापरवाह रवैये को दर्शाता है। जहां तक जेल प्राधिकारी द्वारा राज्य सरकार को अभ्यावेदन भेजने में अस्पष्ट देरी का सवाल है, उन्होंने रतन सिंह आदि बनाम पंजाब राज्य और अन्य 1, असलम अहमद ज़हीर अहमद शेख बनाम भारत संघ एवं अन्य 2 और बी. अलामेलु बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्य 3 मामले में इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया। वकील ने प्रस्तुत किया कि निर्णयों की एक लंबी श्रृंखला में, निरोध में लिए गए लोगों के अभ्यावेदन पर विचार करने में अधिकारियों द्वारा दिखाई गई लापरवाही या आकस्मिक दृष्टिकोण की इस न्यायालय द्वारा कड़ी आलोचना की गई है, क्योंकि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 22 (5) के जनादेश का उल्लंघन करता है। ऐसी स्थिति में निरुद्धि का आदेश निरस्त किये जाने योग्य है। इस संबंध में, उन्होंने श्रीमती खातून बेगम वगै बनाम भारत संघ व अन्य 4, हरीश पाहवा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य 5,

के.एम. अब्दुल्ला कुन्ही और बी.एल. अब्दुल खादर बनाम भारत संघ 6, कुन्दनभाई दुलाभाई शेख आदि बनाम जिला मजिस्ट्रेट, अहमदाबाद आदि बनाम भारत संघ और अन्य 7, वेनमथी सेल्वम (श्रीमती) बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्य 8, राजम्मल बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्य 9, हर्षला संतोष पाटिल बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य 10, पेबम निंगोल मिकोई देवी बनाम मणिपुर राज्य एवं अन्य 11, और उम्मू सबीना बनाम केरल राज्य एवं अन्य 12 में इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया। वकील ने कहा कि निवारक निरोध के मामलों में अपराध की गंभीरता अप्रासंगिक है। निवारक निरोध किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता पर गंभीर अतिक्रमण है। प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपाय ही उसके लिए उपलब्ध एकमात्र सुरक्षा है और इसलिए, उनका कड़ाई से अनुपालन आवश्यक है। इस संबंध में, वकील ने श्रीमती इच्छू देवी चोरड़िया बनाम भारत संघ और अन्य 13, कमलेशकुमार ईश्वरदास पटेल आदि बनाम भारत संघ और अन्य 14, कुंदनभाई दुलाभाई शेख (उपर) और रेखा बनाम तमिलनाडु राज्य 15 में इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया।

5. जहां तक वकील द्वारा दूसरे बिंदु का आग्रह किया गया कि निरोध प्राधिकारी द्वारा अभ्यावेदन पर कोई स्वतंत्र विचार नहीं किया जाना संबंधित है, हमें यह उल्लेख करना होगा कि इस बिंदु को याचिका में नहीं उठाया गया था और न ही उच्च न्यायालय के समक्ष आग्रह किया गया था। इसे वर्तमान अपील में भी नहीं उठाया गया है। आमतौर पर, हम वकील को

इस न्यायालय में कोई भी मुद्दा उठाने की अनुमति नहीं देते, जिसका उच्च न्यायालय के समक्ष आग्रह नहीं किया गया था। हालाँकि, हम मोहिनुद्दीन उर्फ मोइन मास्टर बनाम जिला मजिस्ट्रेट, बीड और अन्य16 में इस न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखते हुए अभिनिर्धारित किया है कि बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका को अपूर्ण दलीलों के आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता है। इसलिए, हमने विद्वान वकील को इस बिंदु पर प्रचार करने की अनुमति दी है। अपनी दलील के समर्थन में यदि निरोध प्राधिकारी निरोध में लिए गए व्यक्ति के अभ्यावेदन पर स्वतंत्र रूप से विचार नहीं करता है, तो निरोध का आदेश रद्द किया जा सकता है, वकील ने के.एम. अब्दुल्ला कुन्ही (उपर), कमलेशकुमार ईश्वरदास पटेल, वेनमथी सेल्वम (उपर) और हर्षला संतोष पाटिल (उपर) में इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया। वकील ने प्रस्तुत किया कि इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय के विवादित निर्णय को दरकिनार कर देना चाहिए और 16/04/2012 के निरोध के आदेश को रद्द कर देना चाहिए।

6. हमें यह स्पष्ट करना चाहिए कि इस न्यायालय में बंदी के विद्वान वकील द्वारा सिर्फ यही बिंदु सुझाए गए थे। सुनवाई समाप्त करते हुए, हमने विद्वान वकील को उनके द्वारा आग्रह किए गए उपरोक्त बिंदुओं पर अधिकारियों की एक सूची प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। राज्य के विद्वान अधिवक्ता को उपरोक्त बिन्दुओं पर अपना उत्तर प्रस्तुत करना था। हमें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि बंदी के वकील द्वारा प्रस्तुत नोट में, उन्होंने ‘‘नए

बिंदु'' शीर्षक के तहत इस न्यायालय के चार निर्णयों का हवाला दिया है। ये बिंदु सूत्रबद्ध नहीं हैं। इस प्रकार, राज्य के विद्वान वकील को उन नए बिंदुओं पर उत्तर देने के अवसर से वंचित कर दिया गया है। हम भी यह नहीं समझ पा रहे हैं कि वे ''नए बिंदु'' कौन से हैं। हम इस आचरण से नाखुश हैं। लेकिन, किसी भी मामले में, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, चूंकि हम एक निवारक निरोध आदेश से निपट रहे हैं, हम उन चार निर्णयों पर गौर करेंगे।

7. दूसरी ओर, महाराष्ट्र राज्य के विद्वान वकील श्री अरुण आर. पेडनेकर ने निवेदन किया कि अभ्यावेदन पर अत्यंत तत्परता से विचार किया गया है और राज्य द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण उचित और संतोषजनक है। वकील ने प्रस्तुत किया कि यदि देरी को ठीक से समझाया गया है, तो संवैधानिक अनिवार्यता का कोई उल्लंघन नहीं है। यदि राज्य सरकार द्वारा कोई उदासीनता या शिथिलता नहीं दिखाई गई है, तो अभ्यावेदन पर विचार करने में देरी के आधार पर निरोध के आदेश को रद्द नहीं किया जा सकता है। इस संबंध में, उसने के.एम. अब्दुल्ला कुन्ही (उपर) और सैयद अब्दुल अला बनाम भारत संघ17 में संविधान पीठ के निर्णयों पर भरोसा किया। वकील ने प्रस्तुत किया कि किसी भी स्थिति में यदि यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अभ्यावेदन पर विचार करने में अस्पष्टीकृत देरी हो रही है, उस आधार पर आदेश या निरोध को रद्द नहीं किया जा सकता। केवल जारी निरोध ही अमान्य हो जाता है। इस

संबंध में, उन्होंने इस न्यायालय के यूनियन ऑफ इंडिया बनाम हरीश कुमार18, और यूनियन ऑफ इंडिया बनाम मनीष बहल उर्फ निशु19 के फैसलों पर भरोसा किया। जहां तक इस दलील का सवाल है कि निरोध प्राधिकारी द्वारा अभ्यावेदन पर स्वतंत्र रूप से विचार नहीं किया गया था, वकील ने कहा कि उच्च न्यायालय के समक्ष ऐसा कोई आधार नहीं उठाया गया था और न ही इसे याचिका में लिया गया था और इसलिए, निरोध में लिए गए व्यक्ति को निरोध में लेने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। इस स्तर पर, वकील ने प्रस्तुत किया कि किसी भी मामले में, निरोध प्राधिकारी का शपथपत्र स्पष्ट रूप से स्थापित करता है कि निरोध प्राधिकारी द्वारा अभ्यावेदन पर स्वतंत्र विचार किया गया है। इसलिए अपील खारिज किये जाने योग्य है।

8. सबसे पहले, हमें इस न्यायालय द्वारा पूछे गए एक प्रश्न पर ध्यान देना चाहिए कि क्या बंदी इस अपील पर दबाव डालना चाहता है, यदि बंदी को पहले ही नजरबंदी से रिहा कर दिया गया है, तो बंदी के वकील ने प्रस्तुत किया कि उसके पास अपील पर दबाव डालने के निर्देश हैं। क्योंकि यदि इस न्यायालय द्वारा निरोध आदेश को रद्द कर दिया जाता है, तो तस्कर और विदेशी मुद्रा हेरफेर अधिनियम, 1976 के प्रावधानों के तहत निरोध में लिए गए व्यक्ति के खिलाफ शुरू की गई कार्यवाही स्वतः ही समाप्त हो जाएगी। इसलिए, हम उसकी दलीलों से निपटने के लिए आगे बढ़ते हैं।

9. विद्वान वकील ने आग्रह किया कि निवारक निरोध मामले में अपराध की गंभीरता अप्रासंगिक है। हम इस निवेदन से पूरी तरह सहमत हैं और इसलिए, इस बिंदु पर उनके द्वारा उद्धृत निर्णयों का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है।

10. हम पहले इस दलील से निपटेंगे कि निरोध प्राधिकारी ने बंदी के अभ्यावेदन पर स्वतंत्र रूप से विचार नहीं किया है। जैसा कि हमने पहले ही देख चुके हैं, इस बिंदु को याचिका में नहीं उठाया गया था और माना जाता है कि उच्च न्यायालय के समक्ष आग्रह नहीं किया गया था। निरोध प्राधिकारी द्वारा किसी अभ्यावेदन पर स्वतंत्र रूप से विचार किया गया है या नहीं, यह निरोध प्राधिकारी को शपथपत्र पर बताना है। यह तथ्य निरोध प्राधिकारी की विशेष व्यक्तिगत जानकारी में है। यदि यह मुद्दा रिट याचिका में उठाया गया होता, तो निरोध प्राधिकारी ने अपने शपथपत्र में इसका निपटारा कर दिया होता। इन परिस्थितियों में, यदि निरोध प्राधिकारी के शपथपत्र में कोई स्पष्ट बयान नहीं है कि उसने स्वतंत्र रूप से अभ्यावेदन पर विचार किया था, तो उसे इसके लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। ऐसा कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि निरोध प्राधिकारी ने अभ्यावेदन पर स्वतंत्र रूप से विचार नहीं किया। शपथपत्र में उन्होंने कहा है कि अभ्यावेदन को संबंधित सहायक, अण्डर सचिव और उप सचिव के माध्यम से संसाधित किया गया और फिर उनके सामने रखा गया। उसने 24/7/2012 को इसे अस्वीकार कर दिया। इस प्रक्रिया पर तब तक कोई

आपत्ति नहीं की जा सकती जब तक कि अभ्यावेदन पर कार्यवाही करने में कोई ढिलाई न बरती जाये। यहां चार दिन के अंदर सारी प्रक्रिया पूरी कर ली गई। हमने रिकार्ड देखा है। संबंधित सहायक, अण्डर सचिव और उप सचिव ने फाइल पर महज अपने हस्ताक्षर किये हैं। उन्होंने कोई राय व्यक्त नहीं की है। इसलिए, यह दलील कि निरोध प्राधिकारी ने स्वतंत्र रूप से अभ्यावेदन पर विचार नहीं किया है और वह अधीनस्थ अधिकारियों द्वारा किए गए समर्थन से बिना किसी आधार के प्रभावित हो सकती है। यहां यह ध्यान रखना आवश्यक है कि वर्तमान अपील में भी यह मुद्दा नहीं उठाया गया है। यदि इसे उठाया गया होता, तो हमने निरोध प्राधिकारी को इस न्यायालय में शपथपत्र दायर करने के लिए कहा होता। उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हम इस अनुरोध को अस्वीकार करते हैं।

11. अब हम नए बिंदु शीर्षक के तहत विचार में उल्लिखित निर्णयों से निपटेंगे। जहां तक मोहिनुद्दीन का संबंध है, हम पहले ही इस फैसले पर चर्चा कर चुके हैं। इसलिए इसे दोबारा संदर्भित करना आवश्यक नहीं है। जहां तक हरीश पाहवा का संबंध है तो हम पाते हैं कि इस फैसले में किसी नये बिंदु पर चर्चा नहीं की गयी है। इसमें यह भी कहा गया है कि जब तक अंतिम निर्णय नहीं ले लिया जाता और बंदी को सूचित नहीं कर दिया जाता, तब तक बंदी के प्रतिनिधित्व पर लगातार कार्रवाई की जानी चाहिए। दूसरा निर्णय बेबी डेवेसी चुली उर्फ बॉबी बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एवं अन्य 20 है। इस मामले में, इस न्यायालय ने कहा है कि यदि कोई व्यक्ति

निरोध में है और, उसकी रिहाई की कोई आसन्न संभावना नहीं है, तो नियम यह है कि निवारक निरोध की शक्ति का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। इस मामले में, बंदी को 20/8/2011 को जमानत पर रिहा कर दिया गया और 16/4/2012 को नजरबंदी आदेश पारित किया गया। इस प्रकार, जब निरोध का आदेश पारित किया गया तो बंदी निरोध में नहीं था। इसलिए, इस निर्णय का वर्तमान मामले पर कोई अनुप्रयोग नहीं है। चैथा निर्णय, जिसमें एक नया बिंदु बताया गया है, सईद जाकिर हुसैन मलिक बनाम महाराष्ट्र राज्य 21 है। उस मामले में, निरोध आदेश पारित करने में देरी और निरोध आदेश के निष्पादन में देरी के आधार पर निरोध आदेश को रद्द कर दिया गया था। हमने निरोध प्राधिकारी के शपथपत्र का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है। निरोध प्राधिकारी ने बताया है कि क्या कदम उठाए गए थे और प्रायोजक प्राधिकारी द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव को निरोध आदेश पारित होने तक कैसे संसाधित किया गया था। प्रायोजक प्राधिकरण ने प्रस्ताव प्रस्तुत किए जाने तक अपने द्वारा उठाए गए कदमों के बारे में बताते हुए शपथपत्र भी दायर किया है। उच्च न्यायालय ने सही माना है कि उक्त स्पष्टीकरण संतोषजनक है। इस संबंध में, राजेंद्रकुमार नटवरलाल शाह बनाम गुजरात राज्य 22, में इस न्यायालय के फैसले पर उच्च न्यायालय द्वारा भरोसा करना उपयुक्त है। हम प्रासंगिक पैराग्राफ को उद्धृत करना उचित समझते हैं।

"10. इस परिप्रेक्ष्य से देखने पर, हम विभिन्न उच्च न्यायालयों के मार्गदर्शन के लिए इस बात पर जोर देना और स्पष्ट करना चाहते हैं कि विदेशी मुद्रा संरक्षण जैसे निवारक निरोध से संबंधित कानून के तहत निरोध के आदेश देने में देरी के बीच अंतर किया जाना चाहिए और तस्करी गतिविधियों की रोकथाम अधिनियम, 1974 और संविधान के अनुच्छेद 22(5) के प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपायों के अनुपालन में देरी। इस न्यायालय द्वारा निर्णयों की एक श्रृंखला में यह निर्धारित किया गया है कि कार्रवाई करने में अस्पष्टीकृत देरी का नियम लचीला नहीं है। बिल्कुल स्पष्ट रूप से, तस्करी और विदेशी मुद्रा रैकेटियरिंग में लगे व्यक्तियों से प्रभावी ढंग से निपटने के उद्देश्य से बनाए गए विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी गतिविधियों की रोकथाम अधिनियम, 1974 जैसे कानून के तहत निरोध के आदेश बनाने में देरी के मामलों में, जो, अपने बड़े संसाधनों और प्रभाव के कारण अर्थव्यवस्था और इस प्रकार राष्ट्र की सुरक्षा के लिए एक गंभीर खतरा पैदा हो रहा है, न्यायालयों को केवल निरोध के आदेश देने में देरी के कारण यह नहीं मानना चाहिए कि ऐसी देरी, यदि संतोषजनक ढंग से नहीं बताई गई है, अनिवार्य रूप से इस निष्कर्ष को जन्म देना

चाहिए कि निरोध प्राधिकारी की व्यक्तिपरक संतुष्टि के लिए कोई पर्याप्त सामग्री नहीं थी या ऐसी व्यक्तिपरक संतुष्टि वास्तव में प्राप्त नहीं हुई थी। इस तरह का दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता तब तक नहीं होगी जब तक कि न्यायालय को यह पता न चल जाए कि आधार ''बासी'' या भ्रामक हैं या कि आधार और निरोध के विवादित आदेश के बीच कोई वास्तविक संबंध नहीं है। अनिल कुमार भसीन बनाम भारत संघ एवं अन्य, सीआरएल डब्ल्यू.नं.410/86 दिनांक 2.2.1987, भूपिंदर सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य, सीआरएल डब्लू. नं. 375/86 दिनांक 11.12.1986, सुरिंदर पाल सिंह बनाम एम.एल. वधावन एवं अन्य, सीआरएल डब्लू. नं. 444/86 दिनांक 9.3.1987 और रमेश लाल बनाम दिल्ली प्रशासन, सीआरएल डब्लू. नं.43/84 दिनांक 16.4.1984 में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा विपरीत निर्णय और इसी दृष्टिकोण वाले अन्य मामले अच्छे कानून का निर्धारण नहीं करते हैं और तदनुसार खारिज कर दिए जाते हैं।"

इस न्यायालय की उपरोक्त टिप्पणियों के आलोक में हमारी राय में, निरोध के आदेश को इस आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता है कि निरोध आदेश जारी करने में देरी हुई है। जहां तक निरोध आदेश के

निष्पादन में देरी का सवाल है, निरोध प्राधिकारी के शपथपत्र से यह प्रतीत होता है कि बंदी कर्नाटक राज्य के मैंगलोर का निवासी है। सीएसआई एयरपोर्ट, मुंबई के काफेपोसा सेल के सीमा शुल्क उपायुक्त, रवींद्र कुमार दास के शपथपत्र से यह प्रतीत होता है कि चूंकि बंदी कर्नाटक राज्य के मैंगलोर का निवासी था, इसलिए निरोध का आदेश, निरोध का आधार और संबंधित दस्तावेज अग्रेषित किए गए थे। कर्नाटक राज्य को और निरोध का आदेश, इसलिए केवल 10/05/2022 को ही निरोध में लिया जा सका। इस मामले के विशिष्ट तथ्यों के आधार पर, हमारी राय में, उच्च न्यायालय ने इस दलील को सही ढंग से खारिज कर दिया है। हम इस बिंदु पर उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं।

12. अब हम इस निवेदन पर विचार करेंगे कि राज्य सरकार द्वारा बंदी के प्रतिनिधित्व के निपटारे में देरी हो रही है। अपीलकर्ता के विद्वान वकील द्वारा कई निर्णयों का हवाला दिया गया है। उन सभी का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है क्योंकि वे समान सिद्धांतों को दोहराते हैं। हम फ्रांसिस कोरली मुलिन बनाम डब्ल्यू.सी. खांबरा23, मामले में इस न्यायालय की टिप्पणियों से शुरुआत कर सकते हैं। उक्त निर्णय का प्रासंगिक भाग इस प्रकार हैः

‘‘समय की अनिवार्यता कभी भी एकदम सही या जुनूनी नहीं हो सकती‘‘।

एल.एम.एस. में उम्मा सलीम बनाम बी.बी. गुजरा, (1981) 3 एससीसी 317: में यह अभिनिर्धारित किया गया था, यह आयोजित किया गया थाः

> ‘‘इस न्यायालय द्वारा कभी-कभार की गई टिप्पणियाँ कि प्रतिनिधित्व से निपटने में प्रत्येक दिन की देरी को पर्याप्त रूप से समझाया जाना चाहिए, उस उद्देश्य इस बात पर जोर देने के लिए है अभियान जिसके साथ प्रतिनिधित्व पर विचार किया जाना चाहिए और यह नहीं कि यह एक जादुई सूत्र है, जिसके थोड़े से उल्लंघन का परिणाम, बंदी को निरोध से मुक्त होना चाहिए। कानून जीवन के तथ्यों से संबंधित है। कानून में, जीवन की तरह, कोई अपरिवर्तनीय निरपेक्षता नहीं है। न तो जीवन को और न ही कानून को केवल निरंकुश फार्मूलों तक सीमित किया जा सकता है।"

13. इस न्यायालय की संविधान पीठ की टिप्पणियों का उल्लेख करना भी आवश्यक है। के.एम. अब्दुल्ला कुन्ही जो इस प्रकार पढ़ता हैः

> “12. अनुच्छेद 22 का खंड (5) सरकार पर यथाशीघ्र प्रतिनिधित्व पर विचार करने का कानूनी दायित्व डालता है। यह एक संवैधानिक आदेश है जो संबंधित प्राधिकारी को, जिसे बंदी अपना अभ्यावेदन सौंपता है, अभ्यावेदन पर

विचार करने और यथासंभव शीघ्रता से उसका निपटान करने का आदेश देता है। अनुच्छेद 22 के खंड (5) में आने वाले शब्द ‘‘जितनी जल्दी हो सके‘‘ फ्रैमर्स की चिंता को दर्शाते हैं कि प्रतिनिधित्व पर शीघ्रता से विचार किया जाना चाहिए और बिना किसी टालने योग्य देरी के तात्कालिकता की भावना के साथ इसका निपटान किया जाना चाहिए। हालाँकि, इस संबंध में कोई सख्त नियम नहीं हो सकता। यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। संविधान या संबंधित निरोध कानून के तहत ऐसी कोई अवधि निर्धारित नहीं है, जिसके भीतर प्रतिनिधित्व पर कार्रवाई की जानी चाहिए। हालाँकि, आवश्यकता यह है कि अभ्यावेदन पर विचार करने में लापरवाही, ढिलाई या संवेदनहीन रवैया नहीं होना चाहिए। प्रतिनिधित्व के निपटान में कोई भी अस्पष्ट देरी संवैधानिक अनिवार्यता का उल्लंघन होगी और यह निरंतर निरोध को अस्वीकार्य और अवैध बना देगी।"

14. संविधान पीठ द्वारा निर्धारित सिद्धांत और अन्य निर्णय जिनका हमने पहले उल्लेख किया है, उन्हें संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सकता है। संविधान का अनुच्छेद 22(5) सरकार पर बंदी के प्रतिनिधित्व पर यथाशीघ्र विचार करने का कानूनी दायित्व डालता

है। हालाँकि अभ्यावेदन के निस्तारण के लिए कोई समय सीमा निर्धारित नहीं है, लेकिन संवैधानिक अनिवार्यता यह है कि इसका निस्तारण यथाशीघ्र किया जाना चाहिए। कोई भी लापरवाह उदासीनता, ढिलाई या संवेदनहीन रवैया नहीं होना चाहिए। कोई भी अस्पष्ट देरी संवैधानिक अनिवार्यता का उल्लंघन होगी और यह बंदी के निरंतर निरोध को अवैध बना देगी। हालाँकि, इसका मतलब यह नहीं है कि बंदी के प्रतिनिधित्व से निपटने में हर दिन की देरी को समझाया जाना चाहिए। प्रस्तुत स्पष्टीकरण उचित होना चाहिए जिससे यह पता चले कि कोई ढिलाई या उदासीनता नहीं थी। हालाँकि देरी स्वयं घातक नहीं है, लेकिन जो देरी अस्पष्ट रहती है वह अनुचित हो जाती है। अदालत निश्चित रूप से इस बात पर विचार कर सकती है कि देरी अनुमेय कारणों से हुई या अपरिहार्य कारणों से। यह कहना पर्याप्त नहीं है कि देरी बहुत कम थी। इससे भी अधिक विलंब को भी समझाया जा सकता है। इसलिए परीक्षण की अवधि या विलंब की सीमा नहीं है, बल्कि संबंधित प्राधिकारी द्वारा इसकी व्याख्या कैसे की जाती है। यदि अंतरविभागीय परामर्शी प्रक्रियाएं ऐसी हैं कि देरी अपरिहार्य हो जाती है, तो ऐसी प्रक्रियाएं संवैधानिक आदेश का उल्लंघन करेंगी। निरोध का आदेश देने के लिए बाध्य किसी भी प्राधिकारी को अभ्यावेदन पर शीघ्र विचार करने के लिए गणना की गई प्रक्रिया अपनानी चाहिए। ऐसा

अभ्यावेदन प्राप्त होते ही उस पर विचार किया जाना चाहिए और अंतिम निर्णय लेने और बंदी को सूचित किए जाने तक लगातार (जब तक कि इसके संबंध में कुछ सहायता की प्रतीक्षा करना आवश्यक न हो) निपटाया जाना चाहिए।

15. उपरोक्त सिद्धांतों के आलोक में, अब यह देखना आवश्यक है कि राज्य सरकार ने इस मामले में बंदी के अभ्यावेदन का निपटारा कैसे किया है। इस संबंध में, प्रासंगिक तिथियां शिवाजी एस. पाटणकर, उप सचिव, महाराष्ट्र सरकार, गृह विभाग (विशेष) के शपथपत्र से, मेधा गाडगिल, प्रमुख सचिव (अपील एवं सुरक्षा), महाराष्ट्र सरकार, गृह विभाग मंत्रालय, मुंबई के शपथपत्र से और रवींद्र कुमार दास, सीमा शुल्क उपायुक्त, काॅफेपोसा सेल, सीएसआई हवाई अड्डा, मुंबई के शपथपत्र से उपलब्ध हैं। हाई कोर्ट ने तीनों शपथपत्रों से महत्वपूर्ण तारीखों का सही पता लगाया है। हमारी राय में, निरोध प्राधिकारी और प्रायोजक प्राधिकारी ने 6/7/2012 के बीच के समय अंतराल को उचित रूप से समझाया है यानी वह तारीख जब निरोध प्राधिकारी द्वारा अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था और निरोध में लिए गए अस्वीकृति के संचार की तारीख यानी 30/7/2012 को उनके द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण उचित एवं स्वीकार्य है। हमने पाया कि अभ्यावेदन प्राप्त होते ही उस पर विचार किया गया और उस पर तब तक लगातार विचार किया गया जब तक कि कोई अंतिम निर्णय नहीं ले लिया गया और बंदी को सूचित नहीं कर दिया गया। निस्संदेह, प्रायोजक प्राधिकारी से पैरा-वार

टिप्पणियाँ प्राप्त करने में समय लगा। लेकिन, कमरुन्निसा बनाम भारत संघ 24, में, इस न्यायालय ने माना है कि प्रायोजक प्राधिकारी की राय मांगने को एक व्यर्थ अभ्यास नहीं कहा जा सकता है। इस प्रकार, अभ्यावेदन की प्राप्ति से लेकर उस पर विचार करने और बंदी को अस्वीकृति की सूचना देने के बीच के समय अंतराल को उचित रूप से समझाया गया है।

16. हालाँकि, हमने पाया है कि जेल प्राधिकारी द्वारा निरोध प्राधिकारी को अभ्यावेदन भेजने में हुई देरी को स्पष्ट नहीं किया गया है। यदि जेल अधीक्षक को 23/6/2012 को अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था, तो उन्हें इसे तुरंत निरोध प्राधिकारी को भेजना चाहिए था। निरोध प्राधिकारी को यह 6/7/2012 को प्राप्त हुआ है। 23/6/2012 और 6/7/2012 के बीच का समय अंतराल बिल्कुल भी स्पष्ट नहीं किया गया है। निरोध प्राधिकारी द्वारा केवल यह कहा गया है कि 23/6/2012 और 1/7/2012 सार्वजनिक अवकाश थे। जेल अधीक्षक, नासिक रोड सेंट्रल जेल, नासिक की ओर से निष्क्रियता के लिए कोई स्पष्टीकरण नहीं है। उन्होंने यह बताने के लिए कोई शपथपत्र दाखिल करने की परवाह नहीं की कि 23/6/2012 को उन्हें जो अभ्यावेदन प्राप्त हुआ था, उसे निरोध प्राधिकारी को तुरंत क्यों नहीं भेजा गया। पेबम निंगोल मिकोई देवी में, केंद्र सरकार को अभ्यावेदन अग्रेषित करने में सात दिनों की अस्पष्ट देरी को घातक माना गया था। असलम अहमद ज़हीर अहमद शेख के मामले में, बंदी ने केंद्र सरकार को

आगे भेजने के लिए 16/6/1998 को जेल अधीक्षक को अपना अभ्यावेदन सौंपा था। इसे सात दिनों की अवधि तक अनुपस्थित रखा गया और परिणामस्वरूप, जेल अधीक्षक को सौंपे जाने के 11 दिन बाद यह सरकार के पास पहुंच गया। जेल अधीक्षक ने देरी का कारण नहीं बताया। विजय कुमार बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य 25, पर भरोसा करते हुए, निरोध में लिए गए व्यक्ति के निरंतर निरोध को रद्द कर दिया गया था। पुनरावृत्ति की लागत पर, हमें ध्यान देना चाहिए कि इस मामले में, जेल अधीक्षक ने देरी के बारे में बताते हुए कोई शपथपत्र दायर नहीं किया है। इसलिए, यह देरी, हमारी राय में, निरोध में लिए गए व्यक्ति के निरंतर निरोध को अवैध बना देती है।

17. हम यह स्पष्ट करना चाहेंगे कि बंदी के अभ्यावेदन के निपटान में देरी ने केवल बंदी के निरंतर निरोध को दूषित किया है, न कि निरोध के आदेश को। मीना जयेंद्र ठाकुर बनाम भारत संघ 26, में, यह न्यायालय एक ऐसे मामले पर विचार कर रहा था जहां बंदी को उक्त अधिनियम के प्रावधानों के तहत निरोध में लिया गया था। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यदि निरोध प्राधिकारी अपने समक्ष मौजूद सामग्रियों के आधार पर निरोध के आदेश पारित करने की आवश्यकता के संबंध में अपनी संतुष्टि पर पहुंचता है और उसके बाद आदेश पारित करता है, तो उसे किसी कारण से शून्य नहीं माना जा सकता है। बाद में बंदी के अधिकार का उल्लंघन या कानून के तहत निर्धारित प्रक्रिया का अनुपालन

न करना क्योंकि उक्त अधिनियम की धारा 3(1) के अंतर्गत निरोध का आदेश देते समय निरोध प्राधिकारी की संतुष्टि नहीं होती है। यह उक्त अधिनियम की धारा 3(1) के तहत जारी निरोध के आदेश की वैधता को प्रभावित नहीं करता है। इसी तरह का दृष्टिकोण इस न्यायालय द्वारा सैयद अब्दुल अला में लिया गया है। उस मामले में, यह न्यायालय नारकोटिक ड्रग्स एण्ड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1988 में अवैध व्यापार की रोकथाम के तहत जारी निरोध के आदेश से चिंतित था। यह तर्क दिया गया था कि बंदी के अभ्यावेदन पर विचार करते हुए इसमें देरी हुई थी। मीना जयेंद्र ठाकुर पर भरोसा करते हुए, इस न्यायालय ने कहा कि भले ही यह मान लिया जाए कि अभ्यावेदन पर विचार करने में कुछ देरी हुई है, लेकिन इससे निरोध का मूल आदेश दूषित नहीं होगा। देरी के कारण, बंदी के केवल आगे के निरोध की अवधि अवैध हो जाएगी। अभ्यावेदन पर विचार करने में हुए विलम्ब अपने आप में निरोध आदेश को दूषित नहीं करता है। हरीश कुमार मामले में, यह न्यायालय उक्त अधिनियम के प्रावधानों के तहत जारी निरोध के आदेश पर फिर से विचार कर रहा था। इस न्यायालय ने उसी दृष्टिकोण को दोहराया और माना कि उपलब्ध सामग्री के आधार पर निरोध प्राधिकारी की संतुष्टि पर पारित निरोध आदेश केंद्र सरकार को निरोध में लिए गए अभ्यावेदन पर विचार न करने के कारण किसी भी तरह से रद्द नहीं किया जाता है। यह माना गया कि निरोध के प्रारंभिक आदेश को शुरू से ही रद्द नहीं किया गया था। यह

ध्यान दिया जा सकता है कि के.एम. अब्दुल्ला कुन्ही में इस न्यायालय की संविधान पीठ ने भी माना था कि बंदी के अभ्यावेदन के निपटान में कोई भी अस्पष्ट देरी संवैधानिक अनिवार्यता का उल्लंघन होगी और यह निरंतर निरोध को अस्वीकार्य और अवैध बना देगी और बंदी के निरंतर निरोध को अपास्त कर दिया जाएगा।

18. इस स्पष्ट कानूनी स्थिति के मद्देनजर, हम मानते हैं कि निरोध का आदेश दिनांक 16/4/2012 वैध है। हालाँकि, राज्य सरकार द्वारा बंदी के अभ्यावेदन के निपटान में देरी के कारण, बंदी की निरंतर निरोध को अवैध बना दिया गया है। इसलिए, हम निर्देश देते हैं कि निरोध में लिए गए अब्दुल नासर आदम इस्माइल को तुरंत निरोध से रिहा किया जाए, यदि उसे पहले ही निरोध से रिहा नहीं किया गया है और किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है। तदनुसार अपील का निपटारा किया जाता है।

के.के.टी.

अपील निस्तारित।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी सुरेन्द्र सिंह (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।